मानव का इतिहास, बकरियों की ज़बानी

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

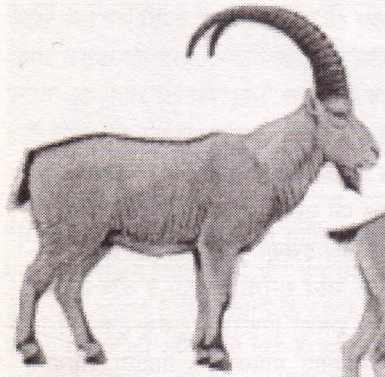

जंगली बकरा
(कैप्रा हिर्कस)

इबेक्स
(कैप्रा इबेक्स)

मार्खोर
(कैप्रा फाल्कोनेरी)

नीलगिरी तार
(हर्मीट्रेगस हायलोक्रियस)

हिमालयी तार
(हर्मीट्रेगस जेमीहिकस)

एक यहूदी लोककथा है: रब्बी ने अपने शिष्य से पूछा कि तुम यह कैसे पता करोगे कि रात खत्म हो गई है और दिन शुरू हो रहा है।

शिष्य ने जवाब दिया - शायद यह वह समय होता है जब आप दूर से देखकर एक बकरे और भेड़ में अन्तर कर सकें।

रब्बी ने कहा, नहीं।

तो शायद यह वह समय होता है जब आप एक अंजीर के पेड़ और एक जैतून के पेड़ के बीच दूर से देखकर अंतर कर पाएं। रब्बी ने कहा, नहीं, यह वह समय होता है जब तुम अपने से भिन्न इंसानों को देख सकते हो और उन्हें भाई-बहनों के रूप में पहचान सकते हो, इसके पहले तक रात होती है।

जैव विकास का विज्ञान इस लोककथा के सच और विवेक को आगे बढ़ाकर दुनिया के समस्त जीवों तक फैला देता है। जब हम अलग-अलग दिखने वाले जीवों के जीन्स का पता लगाते हैं तो पाते हैं कि उन सबमें अधिकाधिक समानताएं हैं। आज हम जीन्स का अध्ययन करके उनका काल निर्धारण कर सकते हैं और उनके वंशवृक्ष निर्मित कर सकते हैं।

एक कोशिकीय अतीत

जिनेटिक विश्लेषण से पता चला है कि हमारा अतीत एकल-कोशिकीय जीवों से जुड़ा है जो इस धरती पर चार अरब वर्ष पहले अस्तित्व में थे। आप यदि यह देखें कि आप जो शक्कर खाते हैं उसे पचाते कैसे हैं तो पाएंगे कि आप आज भी उन्हीं अरबों वर्ष पुरानी रासायनिक रणनीतियों का, विधियों का, एन्ज़ाइमों और सह-एन्ज़ाइमों का उपयोग करते हैं। चयापचय (यानी पचाने-बनाने) की ऐसी कड़ियों का अध्ययन जैव रसायन शास्त्र के अन्तर्गत किया जाता है। इस तरह

के अध्ययनों से जीव वैज्ञानिक धरती पर जीवों के वंशवृक्ष निर्मित करते हैं। इन वंशवृक्षों को फायलोजिनी कहा जाता है। जिनेटिक (अनुवांशिकी म्यूटेशन) के विकास के साथ इस विषय को ताकत मिली और इसमें गहनता आई। अब जीवों के वंशवृक्षों का बनना और उनकी पुष्टि जीन श्रंखला की तुलना की मदद से की जाती है। कतिपय जीन्स में परिवर्तन या म्यूटेशन काफी नियमित अन्तराल पर होते हैं। जैसे प्रति दस लाख वर्षों में एक-दो म्यूटेशन। इस नियमितता की बदौलत हमें जीन आधारित वंशवृक्ष बनाने के अलावा यह जानने में भी मदद मिलती है कि अतीत में विभिन्न जीवों का पृथक्करण लगभग कब हुआ होगा।

पालतू - कहां, कब, कौन

अगर पुरातत्व और मानव विज्ञान के साथ जिनेटिक सूचनाओं का मिला-जुला इस्तेमाल किया जाए तो हमें अपने इतिहास, संस्कृति व सभ्यता का एक सुसंगत चित्र मिल सकता है। मसलन हाल के सप्ताहों में कई शोध पत्रिकाओं में ऐसे कई आलेख प्रकाशित हुए हैं जो बताते हैं कि इन्सानों ने सबसे पहले किस पशु को, कहां, कब, कैसे और क्यों पालतू बनाया। अब लगभग सभी शोधकर्ता इस बात पर सहमत हैं कि यूरेशियाई महाद्वीपीय विस्तार में सभ्यता का पालना 'फर्टाइल क्रिसेन्ट' था। 'फर्टाइल क्रिसेन्ट' निकट पूर्व के उस भूभाग को कहते हैं जो भूमध्य सागर, काला सागर और कैस्पियन सागर के बीच है तथा चतुर्थी के चन्द्रमा की तरह फारस की खाड़ी की ओर घूमा हुआ है। यहीं पर यूरेशियाई खेती की शुरुआत यूफ्रेट और टिग्रिस नदी के बीच की संकरी पट्टी में हुई थी। लगभग 12 हज़ार वर्ष पूर्व जब आखिरी हिमयुग समाप्त हुआ था, तब इन्सानों ने बड़ी संख्या में शिकार व संग्रहण छोड़कर स्थाई खेती को अपनाया था।

यह भी ज्ञात है कि इससे काफी समय पहले, लगभग 40,000 वर्ष पूर्व इन्सान अमरीका से लेकर ऑस्ट्रेलिया तक घूमा करते थे। जब पहले के हिमयुग के बाद बर्फ पिघली और महाद्वीप एक-दूसरे कट गए तो ये घुमन्तु लोग भी अन्य लोगों से कट गए और उन्हें जीवित रहने के लिए अपनी रणनीति विकसित करनी पड़ी। उन्हें खेती, सामाजिक जीवन कला, दस्तकारी और सभ्यता का जुगाड़ करना पड़ा। किस तरह से भूगोल और पर्यावरण ने इतनी अलग-अलग प्रकार की, स्तरों की और जटिलताओं वाली संस्कृतियों को जन्म दिया, यह अपने आप में एक रोचक कहानी है। इस कहानी को जीव वैज्ञानिक जेरेड डायमंड ने अपनी पुस्तक *'गन्स, जर्म्स एण्ड स्टील'* में बखूबी बयान किया है।

अपनी लम्बी-लम्बी यात्राओं के दौरान इन्सानों का सामना तमाम किस्म के जंगली जानवरों से होता था। किन्तु इन्हें वश में करने, पालतू बनाने और मानव जीवन के ताने-बाने में बांधने का काम तो तभी शुरू हुआ जब बस्तियां बसने लगीं। अब ऐसा प्रतीत होता है कि सबसे पहले पालतू बनाया जाने वाला जानवर बकरा-बकरी थे। या शायद बकरे का ही एक पूर्व रूप रहा होगा जिसे बेज़ोअर कहते हैं। यह घटना आज से करीब 10 हज़ार वर्ष पूर्व प्रारम्भिक नव पाषाण युग की है। पुरातात्विक अन्वेषणों से प्राप्त जानकारी की पुष्टि अब फ्रांस के डॉ. गॉर्डन लुइकार्ट द्वारा किए गए डी.एन.ए. विश्लेषण से भी होती है।

यह अपने आप में एक अचरज की बात है कि निकट पूर्व क्षेत्र में भेड़, गाय, कुत्ते, घोड़े, बिल्ली व मुर्गियों से पहले बकरी को पालतू बनाया गया था। आज तो बकरी इतनी लोकप्रिय नहीं रह गई है क्योंकि यह न तो भेड़ों और लैम्ब की तरह प्यारी-प्यारी सी होती है, न इससे उतना ऊन मिलता है और न ही यह भेड़ों की तरह सीधी-सरल होती है। युनाइटेड किंग्डम में लगभग 85,000 बकरियां हैं जबकि प्रति वर्ष यहां 1 करोड़ 90 लाख भेड़ों को उनके मांस, ऊन व चमड़े के लिए कत्ल कर दिया जाता है। गौरतलब है कि ये आंकड़े 'फुट एण्ड माउथ' (खुरपका) महामारी से काफी पहले के हैं। ऑस्ट्रेलिया की मानव आबादी 1 करोड़ 70 लाख है और यहां भेड़ों की संख्या 16 करोड़ है।

एक ही तने से भेड़, बकरी व सांभर

हो सकता है कि मनुष्य ने भेड़ों को पालना सिर्फ उनकी बेहतर ऊन के कारण नहीं वरन् उनकी 'भेड़-चाल' के कारण भी किया हो। उन्हें घेरकर रखना ज़्यादा आसान

डॉ. इ. रैण्डी ने दस वर्ष पूर्व हेरिडिटी नामक शोध पत्रिका में रेखांकित किया था - उन्होंने भेड़, बकरी और चैमॉइस बक (सांभर) के प्रोटीन का विश्लेषण करके पाया था कि तीनों एक ही तने की शाखाएं हैं। पता चला कि इन तीनों के पूर्वज एक ही हैं और इनमें अलगाव लगभग 60 लाख पूर्व शुरू हुआ था।

होता है। भेड़ें थोड़ी दब्बू भी होती हैं जबकि बकरियों को आसानी से उकसाया जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि बकरियों का अपना दिमाग होता है और वे आसानी से जंगली अवस्था में लौट जाती हैं। अतः उनको सम्भालना मुश्किल होता है।

दूसरी ओर, सकारात्मक बात यह है कि बकरी को अधिक साज़ सम्भाल की ज़रूरत नहीं होती। वह किसी भी चारे पर ज़िन्दा रह लेती है, कोई भी जलवायु झेल लेती है और खूब संतानें पैदा करती है। इसका दूध बेहतर होता है। कई मायनों में तो यह गाय के दूध से भी बेहतर होता है। बकरी के दूध में ओरोटिक अम्ल होता है जो फैटी लीवर रोग से बचाव करता है। इसके अलावा बकरी के दूध में ग्लिसरॉल अधिक होता है जो छोटे बच्चों के लिए अच्छा है। महात्मा गांधी बकरी का दूध ही पसंद करते थे और एक-दो बकरियां सदैव उनके पास होती थीं।

अलबत्ता, जिनेटिक नज़रिए से देखें तो पता चलता है कि भेड़ और बकरी सहोदर हैं; ये दोनों एक ही पूर्वज की संतानें हैं। इस कथा को इटली के डॉ. इ. रैण्डी ने दस वर्ष पूर्व *हेरिडिटी* नामक शोध पत्रिका में रेखांकित किया था - उन्होंने भेड़, बकरी और चैमॉइस बक (सांभर) के प्रोटीन का विश्लेषण करके पाया था कि तीनों एक ही तने की शाखाएं हैं। पता चला कि इन तीनों के पूर्वज एक ही हैं और इनमें अलगाव लगभग 60 लाख पूर्व शुरू हुआ था। यहां चलते-चलते एक रोचक बात और बता दूं कि राशि केप्रिकॉर्न (मकर) का नाम लैटिन शब्द कैप्रा से बना है जिसका अर्थ होता है बकरी। किन्तु एरीज़ (मेष) शब्द की उत्पत्ति थोड़ी मिली-जुली है - उम्ब्रीयन में इसका अर्थ भेड़ा होता है, यूनानी लोग इससे शिशु अर्थ निकालते हैं और आइरिश में इसका अर्थ बकरी है। इंसानों ने तारा समूहों में जब विभिन्न आकृतियों की कल्पना की, तो मेष में उन्हें भेड़ और बकरी दोनों नज़र आए।

बकरी की कथा को और आगे बढ़ाया जा सकता है। 60 लाख वर्ष पूर्व सांभर और भेड़ से अलग होने के बाद बकरियां कई सारी नस्लों में विभक्त होती गईं। आज पश्चिमी विश्व में बकरियों की छः प्रमुख नस्लें हैं- न्यूबियन, एल्पाइन, सानेन, टोगेनबर्ग, ला मांचा और ओबरहास्ली। ये नस्लें मूलतः स्विस, स्पेनिश और अमरीकी संवर्धकों की देन हैं। प्रत्येक नस्ल को उसके किसी विशिष्ट गुण - जैसे मांस, दूध, चमड़ा और ऊन के लिहाज़ से चुना गया है। अन्य स्थानों पर केमरून ड्वार्फ, दक्षिण अफ्रीका की बोर, कैश्मीर (ऊन के लिए प्रसिद्ध ऑस्ट्रेलियाई नस्ल) और अंगोरा (बढ़िया मोहैर ऊन के लिए अमरीका में पाली जाती है) नस्लें मिलती हैं। फारसी लोगों का मत है कि ये सभी मूल फारसी नस्ल बेज़ोअर, पासन, इबेक्स और मंचोर की ही संतानें हैं।

पालतू बकरियों की उत्पत्ति व वंशवृक्ष की कथा को अब लुइकार्ट और उनके साथियों ने स्पष्ट बयान कर दिया है। उन्होंने देखा कि पालतू बकरियों की उत्पत्ति पर कई विवाद हैं। पुरातात्विक अन्वेषणों से लगता है कि बकरी को सर्वप्रथम 10,000 वर्ष पहले 'फर्टाइल क्रिसेंट' में पालतू बनाया गया था। दूसरी ओर कुछ प्रमाण दर्शाते हैं कि इसे दूसरी बार वर्तमान पाकिस्तान के बलूचिस्तान क्षेत्र में पालतू बनाया गया। अन्य लोग कहते हैं कि कैप्रा की कम से कम दो अन्य जंगली नस्लों ने पालतू बकरी के जीन पूल में योगदान दिया है। लुइकार्ट ने सोचा कि इस पूरे मामले को जिनेटिक नज़रिए से देखना ज़रूरी है।

आप शायद कहेंगे कि इस महत्वहीन मुद्दे पर इतना हो-हल्ला करने की और इतना पैसा व मेहनत ज़ाया करने की क्या ज़रूरत है। और बकरियों का वंशवृक्ष जानकर हमें क्या मिलेगा। इस संदर्भ में डॉ. डेविड मैक्हग और डेनियल

बैडली लिखते हैं कि यह अध्ययन हमें नव पाषाण युग के मानव जीवन में झांकने का मौका देता है। इससे हमें पता चलता है कि वह किन संसाधनों पर आश्रित था, उसका अपने परिवेश से क्या रिश्ता था, अन्य पशुओं और वनस्पतियों से क्या सम्बंध था।

बकरी एक मज़बूत जानवर है जो आकार में छोटी है और इसे पालतू बनाना आसान है। यह लगभग कुछ भी खाकर जी सकती है और हमें दूध, मांस, चमड़ा व ऊन उपलब्ध कराती है। साथ ही इसमें तेज़ी से प्रजनन होता है। इसके अलावा इसे एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाना आसान है और इसका उपयोग मुद्रा के रूप में किया जा सकता है। उनका कहना है - "लिहाज़ा हो सकता है कि ये मज़बूत जानवर प्रथम 'चलते-फिरते मांस के भण्डार' रहे होंगे और इन्होंने अन्य जानवरों को पालतू बनाए जाने का मार्ग प्रशस्त किया होगा। बकरी के जीव वैज्ञानिक अध्ययन से हमें पशुपालक मानव के इतिहास में झांकने का मौका मिलता है।

लुइकार्ट व उनके साथियों ने युरोप, एशिया, अफ्रीका व मध्यपूर्व के 44 देशों से 88 नस्लों की 406 बकरियों के डी.एन.ए. का विश्लेषण किया। उन्होंने कोशिका के माइटोकॉण्ड्रिया नामक उपांग के डी.एन.ए. का उपयोग किया। माइटोकॉण्ड्रिया का पूरा डी.एन.ए. मां से आता है। अतः इस डी.एन.ए. के विश्लेषण से जन्तु के मातृवंश का पता लग जाता है - इसमें डी.एन.ए. के पुनर्मिश्रण या बाहरी डी.एन.ए. की मिलावट आदि नहीं होती। इसके अलावा एक तथ्य यह भी है कि माइटोकॉण्ड्रिया के डी.एन.ए. में म्यूटेशन एक लगभग निश्चित अंतराल पर होते हैं। अतः इस डी.एन.ए. में म्यूटेशन दर के अध्ययन से यह भी गणना की जा सकती है कि किन्हीं दो प्रजातियों में पृथक्करण कब हुआ था।

बकरियों की तीन नस्ल

उक्त अध्ययन से पता चला कि बकरियों की तीन नस्लें लगभग 2 लाख वर्ष पहले ही अलग-अलग हो गई थीं। शाखा A पूरे विश्व की बकरियों में पाई जाती है जबकि शाखा C कुछ युरोपीय बकरियों में। किन्तु शाखा B मुख्यतः

पालतूकरण के फलस्वरूप बकरे की खोपड़ी में आए परिवर्तन; पालतू बनाए जाने से पूर्व इसके सींग काफी बड़े हुआ करते थे।

पूर्वी व दक्षिणी एशिया, खासकर बलूचिस्तान में पाई जाती है। तीनों ही शाखाओं में आबादी काफी फैल गई है किन्तु तीन में से दो शाखाओं में विस्तार काफी हाल में (लगभग 8-10 हज़ार वर्ष पूर्व) ही हुआ है। यह वह काल है जब सर्वप्रथम पशुओं को पालतू बनाया जाने लगा था। अर्थात आंकड़े बताते हैं कि पालतू बकरियों के तीन मातृवंश हैं। इनमें से दो को एशिया में, मंगोलिया से लेकर मलेशिया व पाकिस्तान तक में बड़े पैमाने पर पालतू बनाया गया था।

यह विश्लेषण हमारा परिचय मानव इतिहास के एक और पहलू से कराता है। दुनिया भर में बकरियों की जिनेटिक संरचना में अन्तर बहुत कम है। यानी पालतूकरण की प्रक्रिया शुरू होने के बाद इन तीन शाखाओं में काफी मेलजोल रहा है। जीन-प्रवाह की इतनी तेज़ रफ्तार हमें मनुष्यों की गतिशीलता और व्यापार के बारे में भी कुछ बताती है। इससे पता चलता है कि मनुष्य अपने साथ बकरियों को भी दूर-दूर तक ले गए थे और इनका उपयोग विनिमय के लिए अथवा बतौर मुद्रा करते थे। इतिहास में दर्ज है कि बकरियों को समुद्र पार महाद्वीपों में ले जाया जाता था - दूध और मांस के चलते-फिरते स्रोत के रूप में। अपनी पुस्तक *'डोमेस्टिक एनिमल्स फ्रॉम अर्ली टाइम्स'* में डॉ. क्लटन ब्रॉक लिखते हैं कि ऐसा इसलिए हुआ होगा क्योंकि खानपान के मामले में बकरियां काफी बिंदाज़ होती हैं। वे अत्यंत मज़बूत भी होती हैं। इस वजह से वे बहुत कम भोजन मिलने पर भी, किसी भी जलवायु में प्रजनन करने में सक्षम होती हैं।

अन्य पालतू पशुओं की तुलना में बकरी कहां टिकती

हैं। मैक्हग और बैडली बताते हैं कि बकरियों के विपरीत गाय, भेड़, भैंस और सुअरों में तीन की बजाय दो शाखाएं हुई हैं। प्रत्येक में दो शाखाओं में विभाजन हज़ारों वर्षों पहले हुआ था। यह विभाजन पालतूकरण से काफी पहले हो चुका था। इन सारे पशुओं में दो मातृवंशीय शाखाएं हैं - एक एशियाई और दूसरी फर्टाइल क्रिसेंट के आसपास। यह स्पष्ट पूर्व-पश्चिमी अन्तर पालतू पशुओं में दिखाई भी देता है। मसलन कूबड़दार और कूबड़हीन गाएं। किन्तु ये शाखाएं बकरी की अपेक्षा अधिक हाल की हैं। *(स्रोत फीचर्स)*

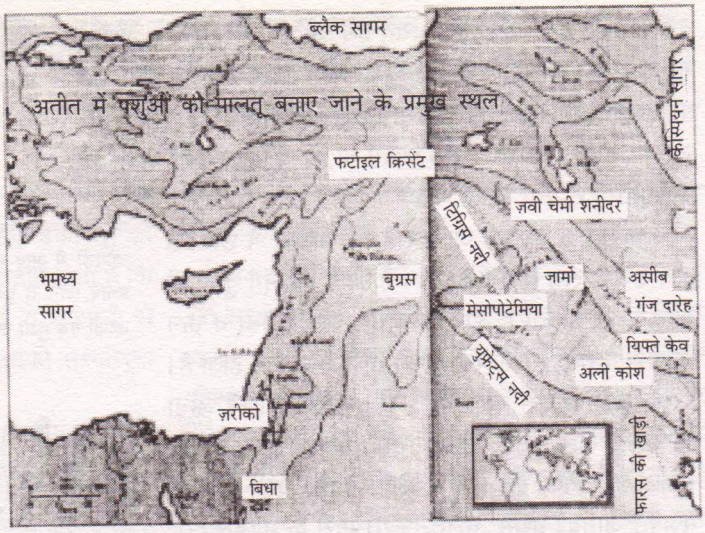

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक सदस्यता शुल्क 150 रुपए कृपया एकलव्य, भोपाल के नाम बने ड्राफ्ट मनीऑर्डर से एकलव्य, ई-7/एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016 के पते पर भेजें